मत्स्याखेट: गेहूं के साथ पीसता घुन

आरोन सैविओ लोबो

कमर्शियल फिशिंग के दौरान और भी कई जीव-जंतु जाल में फंस जाते हैं, जो बहुत काम के नहीं होते। इन्हें बाद में यूं ही फेंक दिया जाता है। इसे 'बायकैच' कहते हैं। ये जीव-जंतु जलीय या समुद्री इकोसिस्टम के अहम हिस्से होते हैं। इन्हें इस तंत्र से हटाने के क्या दुष्प्रभाव हो सकते हैं, इसी पर प्रकाश डालता है यह आलेख। यह समस्या और उसके प्रभावों को कम करने के उपाय भी सुझाता है।

पिछले पांच वर्षों में ऐसे करीब 40000 कछुए मछली के साथ पकड़े गए जिन्हें बाद में फेंक दिया गया

व्यावसायिक मत्स्याखेट का नकारात्मक असर दोहरा होता है - एक तो जो मछलियां लक्षित होती हैं वे मारी जाती हैं। और दूसरा, इस दौरान बहुत सी ऐसी मछलियां या जीव-जंतु भी पकड़ में आ जाते हैं, जो अवांछित होते हैं। इसे 'बायकैच' कहते हैं। इनका व्यावसायिक दृष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं होता। इन्हें या तो जहाज़ से ही वापस समुद्र में फेंक दिया जाता है या फिर लैंडिंग साइट पर पहुंचने के बाद कहीं डंप कर दिया जाता है। वर्ष 2006 में किए गए एक आकलन के अनुसार विश्व में हर साल 73 लाख टन बायकैच पकड़ा जाता है। कई बड़े फिशिंग अभियानों में तो बायकैच की मात्रा लक्षित मछलियों से कहीं ज़्यादा होती है।

बायकैच का मुद्दा 60 व 70 के दशक में उस समय चर्चा में आया था जब पूर्वी ऊष्णकटिबंधीय प्रशांत इलाके में ट्यूना की विभिन्न प्रजातियों की मछलियों के साथ-साथ डॉल्फिन भी आ जाती थीं। इनमें से कई डॉल्फिन्स की मौत भी हो जाया करती थी। यह निश्चित तौर पर चिंता का विषय है क्योंकि बड़े पैमाने पर मछली पकड़ने से कई अन्य प्रकार के प्राणियों जैसे विभिन्न सरीसृपों, समुद्री पक्षियों और स्तनधारियों के लिए भी खतरा पैदा हो गया है। चाहे परम्परागत रूप से मछली पकड़ी जाए या व्यापक पैमाने पर व्यावसायिक रूप से, बायकैच से नहीं बचा जा सकता। हां, इसके प्रभाव में ज़रूर अंतर रहता है। जैसे परम्परागत रूप से मछली पकड़ने पर बायकैच कम होता है, जबकि कमर्शियल फिशिंग में यह ज़्यादा होता है। यहां तक कि कई बार तो समुद्री पक्षी भी बायकैच में आ जाते हैं।

समस्या की जड

बायकैच के लिए श्रिम्प ट्रॉलर सबसे ज़्यादा ज़िम्मेदार माने जाते हैं। ये मछली पकड़ने की उच्च क्षमता से लैस स्वचालित जहाज़ होते हैं। इनमें कीप के आकार का लंबा-सा जाल होता है। इसमें जाल के मुंह का आकार काफी बड़ा होता है, जबकि छिद्र बहुत ही छोटे होते हैं। इस जाल को स्वचालित जहाज़ से समुद्र तल की सतह

से सटाकर खींचा जाता है। इससे जाल के मार्ग में आने वाले सभी जीव-जंतु उसमें समाते जाते हैं। बचने का कोई मौका नहीं होता। श्रिम्प ट्रॉलर 400 से भी अधिक समुद्री प्रजातियों को पकडने में सक्षम है। एक आकलन के अनुसार श्रिम्प ट्रॉलर से बायकैच और लक्षित मछली का अनुपात कम से कम 10:1 है। दुनिया में कुल बायकैच में से एक तिहाई के लिए श्रिम्प ट्रॉलर ही ज़िम्मेदार माने जाते हैं, जबकि ये महज दो फीसदी समुद्री भोजन ही उपलब्ध करवाते हैं।

इस तकनीक की वजह से जीव-जंतुओं के प्राकृतवास में भी दिक्कतें बढ़ रही हैं और जैव विविधता पर नकारात्मक असर पड़ रहा है। भारत में इस तकनीक का आगाज 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुआ था। इसे देश में मछली पकड़ने के लिए सबसे प्रभावी पद्धति माना जाता है। श्रिम्प ट्रॉलर बायकैच की कई श्रेणियां हैं। इनमें से प्रमुख हैं :

- ऐसी प्रजातियों के जीव-जंतु जिनका व्यावसायिक दृष्टि से कोई मोल नहीं होता। इनमें शामिल हैं सीलेंट्रेट व एकाइनोडर्म्स की प्रजातियां, कई प्रकार के गैस्ट्रोपोड्स, क्रस्टेशियन्स (जैसे अखाद्य केंकड़े, मेंटिस श्रिम्प) इत्यादि। कई बार छोटी अखाद्य मछलियां और ईल्स भी पकड़ में आ जाती हैं।

- कुछ जीव-जंतु और मछलियां किसी निश्चित मौसम में अगर बड़ी मात्रा में पकड़ में आ जाएं तो उनका व्याववायिक महत्व हो सकता है। लेकिन कम मात्रा में पकड़ी जाने पर उनकी कोई कीमत नहीं होती और उन्हें वापस समुद्र में फेंक दिया जाता है। उदाहरण के लिए गोवा में झींगा मछली के साथ अगर ऑइल सार्डीन भी बड़ी संख्या में पकड़ में आ जाए तो उनसे तेल प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन संख्या में कम होने पर तेल निकालना व्यावसायिक दृष्टि से लाभदायक नहीं होता है।

- कुछ बायकैच क्षेत्र विशेष में होते हैं, यानी बायकैच में पकडे गए जंतुओं का कहीं तो महत्व होता है और कहीं नहीं। उदाहरण के लिए बाम्बे डक पश्चिमी तट से लगे इलाकों में व्यावसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, लेकिन उडीसा के तटवर्ती इलाकों में इसे फेंक दिया जाता है।

ऊपर वर्णित छोटी, मूल्यहीन और अवांछित प्रजातियों के जीव-जंतुओं के अलावा भारत में श्रिम्प ट्रॉलर से बायकैच के रूप में कभी-कभार डॉल्फिन, पॉरपॉइज़ और समुद्री कछुए जैसे बड़े प्राणी भी पकड़ में आ जाते हैं। इनकी अक्सर मौत भी हो जाती है। हाल ही में हमारे यहां बायकैच में ओलिव रिडले नामक समुद्री कछुए की मौतों ने काफी ध्यान खींचा है। ये कछुए भारत के समस्त समुद्री तटों पर पाए जाते हैं। खासकर उड़ीसा के तट मादा कछुओं द्वारा समूहों में आकर अंडे देने की वजह से काफी प्रसिद्ध हैं। इस घटना को अरिबाडा के नाम से जाना जाता है। गहिरमठ तट से लगा समुद्री इलाका मछलियों के लिए भी बहुत ही उर्वर है। श्रिम्प ट्रॉलर से मछलियां पकड़ने समय हज़ारों ओलिव रिडले कछुए भी पकड़ में आ जाते हैं और अंततः मौत के मुंह में चले जाते हैं। हाल ही में यह क्षेत्र समुद्री अभयारण्य घोषित किया जा चुका है, लेकिन इसके बावजूद वहां अवैध रूप से मत्स्याखेट और साथ में कछुओं की अकाल मौत का सिलसिला भी जारी है। एक अनुमान के अनुसार यहां हर साल करीब 5-10 हजार कछुए पकड़े और मारे जाते हैं।

इस मामले में कछुए अकेले नहीं हैं। गोवा और मन्नार की खाड़ी में अनुसंधान से पता चला है कि समुद्री सर्प जैसे कई अन्य सरीसृप भी बड़ी संख्या में मारे जा रहे हैं। अनुसंधान से यह भी पता चला कि ये सर्प अपने भोजन के लिए उन

मछलियों पर निर्भर हैं, जिन्हें व्यावसायिक इस्तेमाल के लिए पकड़ा जाता है। इस प्रकार ये ट्रॉलर न केवल बायकैच के रूप में इन समुद्री सांपों को मार रहे हैं, बल्कि उनकी भोजन सामग्री को कम करके उन्हें परोक्ष रूप से भी प्रभावित कर रहे हैं। दूसरी ओर, समुद्री तंत्र भी इससे प्रभावित हो रहा है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि परभक्षियों या शिकारी प्राणियों की संख्या कम होने से भोजन ंृखला पर भी असर पड़ता है, क्योंकि परभक्षी अपने शिकार की संख्या को नियंत्रित रखते हैं। इस प्रकार वे संतुलन को बनाए रखने में अहम भूमिका निभाते हैं।

क्यों नहीं होता बायकैच का इस्तेमाल?

छंटाई की समस्याः मछलियों को अलग-अलग छांटने का काम जहाज़ों या नावों पर हाथ से ही किया जाता है। इसलिए वांछित मछलियों को अन्य बायकैच से अलग करने का काम काफी धीमा होता है। बायकैच में से उपयोगी जंतुओं को छांटने का काम तो और भी थकाऊ और समय खपाऊ होता है, जिसे करना कोई नहीं चाहता।

संग्रहण एवं संरक्षण की सीमित सुविधाएंः मछली पकडने वाले छोटे जहाज़ों पर मछलियों के संग्रहण और संरक्षण की सुविधाएं पर्याप्त नहीं होतीं। ऐसे में केवल वांछित मछली को ही संरक्षित रखना पहली प्राथमिकता होती है।

महंगा अनलोडिंगः बंदरगाहों या तटों पर बायकैच को उतारना काफी महंगा होता है। ऐसे में अगर बायकैच व्यावसायिक रूप से बहुत ज्यादा कीमती नहीं है, तो उसे समुद्र में ही फेंकना ठीक समझा जाता है।

क्या बायकैच उपयोगी है?

श्रिम्प ट्रॉलर जैसी अनियंत्रित तकनीकों से व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण समुद्री खाद्य मत्स्य प्रजातियों में तेज़ी से कमी हो रही है। नतीजा यह है कि पहले जिन मछलियों (बायकैच) को अनुपयोगी समझकर फेंक दिया जाता था, अब उनका भी इस्तेमाल होने लगा है। कम से कम एशिया और अन्य विकासशील देशों में यह प्रवृत्ति तेज़ी से बढ रही है। हालांकि विकसित देशों में भारी मात्रा में बायकैच को फेंकने का सिलसिला अब भी जारी है।

भारत के कई तटीय राज्यों में अब स्थानीय मछुआरों से वे मछलियां व अन्य जीव-जंतु खरीदे जाने लगे हैं, जिन्हें कभी बायकैच के रूप में फेंक दिया जाता था। हालांकि इनकी बिक्री काफी सस्ते में होती है। इनमें से अधिकांश को सुखाकर उनका इस्तेमाल मुर्गियों और मछलियों के भोजन के रूप में किया जाता है। इनका उपयोग खाद के रूप में भी किया जाने लगा है।

भारत के पूर्वी तट पर स्थिति थोड़ी अलग है। वहां मछलियों के प्रकार और आकार में विविधता पाई जाती है। इसी प्रकार बायकैच के रूप में पकड़े गए प्राणियों और उनके इस्तेमाल में भी विविधता पाई जाती है। उदाहरण के लिए वहां बडे श्रिम्प ट्रॉलर में ऐसी बायकैच को बर्फ में रखने की सुविधा होती है। ऐसे में इन ट्रॉलर के लंबी यात्रा पर निकलने पर भी इनके स्टोर में ऐसे बायकैच जंतु रहते हैं जिन्हें ये कोलकाता या हावड़ा जैसे बड़े मछली बाज़ारों में बेचकर कुछ पैसा कमा सकते हैं। कुछ बड़े आकार के बायकैच जैसे डॉल्फिन, समुद्री कछुओं इत्यादि को वन्य जीव संरक्षण कानून के तहत ज़मीन पर लाना प्रतिबंधित है। इसलिए जब भी ये पकड़ में आते हैं, तो इन्हें ज़िंदा या मुर्दा समुद्र में ही फेंक दिया जाता है।

बायकैच के खतरे

समुद्र से बायकैच के रूप में पकड़े गए कई जीव-जंतुओं के विनाश का मतलब है समुद्री तंत्र को खतरे में डालना। इसके कई नकारात्मक प्रभाव हो सकते हैं। जैसा कि ऊपर भी बताया गया था, डॉल्फिन, शार्क और समुद्री सांपों जैसे कई बड़े शिकारियों को नष्ट करने से समुद्र में कुछ अन्य प्रजातियों के जंतुओं की संख्या असंतुलित रूप से बढ़ सकती है। दूसरी ओर शिकार मछलियों की संख्या कम होने का भी उनके शिकारियों पर असर पड़ता है।

सार्डीन, मैकरेल और एंकोवी जैसी मछलियां झुंड के रूप में पकड़ी जाती हैं। ये मछलियां न केवल डॉल्फिन और शार्क बल्कि कई समुद्री पक्षियों व स्तनधारियों का भी भोजन होती हैं। कई समुद्री पक्षियों के प्रजनन की सफलता की दर उनके भोजन की उपलब्धता पर निर्भर करती है। इस समस्या को अलास्का की खाड़ी के उदाहरण से समझा जा सकता है। वहां हार्बर सील की संख्या में गिरावट इसलिए आई क्योंकि उनकी भोज्य मछलियों की संख्या में कमी आ गई थी।

समाधान

हालांकि यह समस्या विश्वव्यापी है, लेकिन इसके समाधान के प्रयास अब भी प्रारंभिक अवस्था में ही हैं। समस्या की गंभीरता को कम करने के लिए कुछ कदम उठाए जा सकते हैंः

निगरानी व्यवस्थाः मत्स्य उद्योग के आंकड़े प्रायः उस व्यावसायिक मत्स्याखेट से सम्बंधित होते हैं, जो निर्धारित जगहों पर होता है। ऐसी कोई विधि नहीं है जो विभिन्न प्रकार व माध्यमों से हो रहे मत्स्याखेट के अलग-अलग आंकड़े दे सके। समुद्र में दरअसल कितनी मछलियां पकड़ी जाती हैं, इस बारे में पक्की जानकारी का अभाव होता है। यह इसलिए भी चिंताजनक है क्योंकि बायकैच के एक बड़े हिस्से को समुद्र में ही फेंक दिया जाता है। इससे हमें इस बारे में कोई भनक तक नहीं लग पा रही है कि कितनी समुद्री प्रजातियों पर खतरा है और कितनी पर विलुप्ति की तलवार लटक रही है। हमें पर्याप्त रूप से आंकडे मिल सकें, इसके लिए एक मज़बूत निगरानी व्यवस्था बनानी होगी। इससे मत्स्योद्योग के प्रबंधन में मदद मिलेगी।

तकनीकी जानकारीः उड़ीसा में ओलिव रिडले कछुओं की मौतों से अधिकारियों को एहसास हुआ कि मत्स्याखेट से कई अन्य प्रजातियों पर भी असर पड़ सकता है। लगभग सभी तटों पर ट्रॉलर के जालों में फंसकर बडी संख्या में समुद्री कछुए अपनी जान गंवा रहे हैं। इसी वजह से अधिकारी टर्टल एक्सक्लूडर डिवाइस

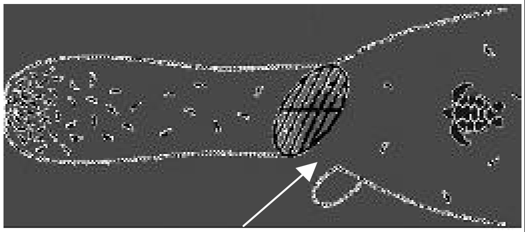

कछुआ बचाव प्रणाली - बड़े जाल के अंदर एक जाली सगी है और वहां जाल खुला रखा गया है।

इस्तेमाल करने पर ज़ोर दे रहे हैं। यह ऐसा जाल है जिसमें केवल झींगा जैसी छोटी मछलियां ही पकड़ में आती हैं, जबकि कछुए, डॉल्फिन जैसे अन्य बड़े प्राणी जाल में आने से बच जाते हैं। हाल ही में एक वैज्ञानिक अध्ययन ने भी भारत में उन सभी स्थानों पर मैकेनाइज़्ड ट्रॉलर में इस यंत्र का इस्तेमाल आवश्यक बनाने की सिफारिश की है जहां बड़े प्राणियों की मृत्यु दर ज़्यादा है। वाइल्ड लाइफ इंस्टीट्यूट आफ इंडिया का यह अध्ययन कहता है कि इससे कुल पकड़ ज़रूर कम होती है, लेकिन बायकैच के हिसाब से यह नुकसान का सौदा नहीं है। लेकिन दुर्भाग्य से भारत में इसका इस्तेमाल पूरी तरह नहीं हो पा रहा है।

इसमें दो राय नहीं कि नई तकनीकों के इस्तेमाल से बायकैच की मात्रा को कम करने में मदद मिलेगी। लेकिन समस्या का यही एकमात्र समाधान नहीं है। इनका इस्तेमाल तभी प्रभावी होगा, जब मौजूदा गति से हो रहे श्रिम्प ट्रॉलर से होने वाले मत्स्याखेट पर कुछ रोक लगे, जो लगता है समुद्री तंत्र को नष्ट करने के लिए ही बनाए गए हैं।

नीतिगत दखल : देश में मत्स्याखेट को नियमित व नियंत्रित करने के लिए कई कानून बने हुए हैं। इनमें एक समुद्री मत्स्याखेट नियमन कानून है जिसके अनुसार समुद्र तट से पांच किलोमीटर की दूरी तक का क्षेत्र 'फिशिंग फ्री ज़ोन' होना चाहिए। वन्य जीव संरक्षण कानून, 1972 कई समुद्री जंतुओं को ज़मीन पर लाने और उनकी खरीद-फरोख्त को प्रतिबंधित करता है। इनमें डॉल्फिन, समुद्री गाय, शार्क व रे मछलियां, कई छोटे प्राणी जैसे मोलस्क, एकाइनोडर्म्स इत्यादि शामिल हैं। मन्नार की

खाडी और पाक खाड़ी में एक दिन छोड़कर मछली पकडी जा रही है। इसी प्रकार सभी तटीय प्रदेशों में मछलियों के प्रजनन मौसम में मत्स्याखेट पर प्रतिबंध रहता है। लेकिन मौजूदा निगरानी व्यवस्था इतनी लचर है कि अवैध मत्स्याखेट लगातार चलता रहता है। कई बार सम्बंधित अधिकारियों को रिश्वत देकर भी इन नियनों की बलि चढ़ा दी जाती है। हालात बद से बदतर हों, इससे पहले ही गंभीर प्रयास करने होंगे। कहीं ऐसा न हो कि हमारे देश की स्थिति भी दक्षिण-पूर्व एशिया के कई क्षेत्रों जैसी हो जाए।

समुद्री संरक्षित क्षेत्रः एक और विकल्प है जिस पर विचार किया जा सकता है। यह विकल्प है समुद्री संरक्षित क्षेत्रों का विकास। कई दूसरे देशों में किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि संरक्षित क्षेत्रों के विकास से न केवल मत्स्य उत्पादन में वृद्धि हुई, बल्कि समुद्री जैव विविधता के संरक्षण में भी मदद मिली। ये क्षेत्र आसपास के उन क्षेत्रों के लिए भी वरदान साबित होते हैं, जहां मछलियों और अन्य प्रजातियों के जंतुओं की संख्या कम हुई है।

भारत के तटवर्ती इलाकों में भी कुछ संरक्षित क्षेत्र हैं, लेकिन उनमें भी समुद्री जीवों का संरक्षण अपेक्षित स्तर तक नहीं हो रहा है। निर्धारित सीमा से अधिक मत्स्याखेट यहां जारी है। मन्नार की खाडी में कोरल रीफ की खुदाई धड़ल्ले से की जा रही है तो कच्छ की खाड़ी में तेल प्रदूषण एक समस्या बना हुआ है।

निष्कर्ष

बोरिस वोर्म की अगुवाई में वैज्ञानिकों के एक दल ने हाल ही में विश्व के सभी प्रमुख तटवर्ती इलाकों और समुद्री क्षेत्रों में मछली पकड़ने के रुझानों का विश्लेषण किया है। उनके निष्कर्ष चौंकाने वाले हैं। इनके अनुसार अगर हम इसी रफ्तार से अपने समुद्री क्षेत्रों की लूट-खसोट करते रहे तो वर्ष 2048 तक व्यावसायिक महत्व की सभी समुद्री प्रजातियां खत्म हो जाएंगी या खत्म होने की कगार पर पहुंच जाएंगी।

खुशकिस्मती से उक्त वैज्ञानिकों का शोध पत्र एक छोटी-सी आशा भी जगाता है। यह कहता है कि अगर हम त्वरित कार्रवाई करें और मौजूदा प्रवृत्ति में बदलाव लाएं तो हालात अब भी संभाले जा सकते हैं। कम से कम स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर तो स्थानीय जैव विविधता की बहाली संभव है। इसके लिए उचित प्रबंधन और समुद्री संसाधनों का बुद्धिमत्तापूर्ण दोहन अनिवार्य होगा।

यह सर्वविदित है कि प्रकृति में खुद को बहाल करने की क्षमताएं असीम हैं। अगर समुद्रों को भी जंगलों की भांति वैसे ही छोड़ दिया जाए, तो वे कुछ ही समय में फिर से अपनी मूल अवस्था में पहुंच जाएंगे। हालांकि उन क्षेत्रों में यह संभव नहीं है जहां लगातार श्रिम्प ट्रॉलिंग से बहुत अधिक नुकसान हो चुका है। इसलिए जो बच गया है, उसे बचाने के लिए भी हमारे पास वक्त बहुत कम है और विकल्प भी बहुत सीमित हैं। हमें बडी तेज़ी से और प्रभावी कार्रवाई करनी होगी। वैज्ञानिक अनुसंधानों का ज़ोर आंकड़े एकत्र करने, निगरानी की समुचित व्यवस्था करने और सटीक भविष्यवाणी करने पर होना चाहिए। वन और मत्स्य विभाग के अधिकारियों में संरक्षण सम्बंधी कानूनों का पालन सख्ती से करवाने और कानून तोड़ने वालों को सज़ा दिलवाने के प्रति संकल्प होना चाहिए।

हमें खुद से कम से कम एक सवाल जरूर पूछना चाहिए - हमारी भावी पीढ़ियों का क्या होगा? इसी के मद्देनज़र हमें मौजूदा संसाधनों का ऐसा विवेकपूर्वक इस्तेमाल करना चाहिए कि अगली पीढ़ियों को भी समुद्री खाद्य पदार्थों की आपूर्ति होती रहे। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

वार्षिक 150 रुपए द्वैवार्षिक 275 रुपए त्रैवार्षिक 400 रुपए